EDUZONE: International Peer Reviewed/Refereed Multidisciplinary Journal (EIPRMJ), ISSN: 2319-5045
Volume 7, Issue 1, January-June, 2018, Impact Factor: 5.138, Available online at: www.eduzonejournal.com

कृष्ण भक्ति साहित्य में प्रेम 'जगन्नाथ वल्लभ नाटक' के सन्दर्भ में

मेजर (डॉ.) बेला मलिक

संस्कृत विभाग, सेठ मथुरादास बिनानी, राजकीय स्नात्कोत्तर महाविद्यालय, नाथद्वारा

सर्वविदित है कि भगवान श्री कृष्ण न केवल हिन्दी साहित्य में अपितु संस्कृत साहित्य में भी महत्त्पूर्ण स्थान पर प्रतिष्ठित हैं। प्राचीन काव्य परम्परा में महाभारत में श्रीकृष्ण एक महानायक, कुशल योद्धा व कर्मयोगी के रूप में चित्रित हुए हैं। तत्पश्चात् पुराण साहित्य में भी श्रीकृष्ण भक्ति की परम्परा जीवित रही लेकिन अन्य सभी पुराणों की अपेक्षा श्रीमद्भागवत् पुराण की प्रसिद्धि इसमें वर्णित श्रीकृष्ण की प्रेम लीलाओं के कारण, जो भक्तिभाव से परिपूर्ण थी, अधिक हुई। यही कारण है कि अधिकांशतः कवियों ने भी कृष्ण के जीवन चरित को आधार बना कर जिन काव्यों की रचना की वे सभी अन्य पुराणों की अपेक्षा श्रीमद्भागवत् पुराण की कथावस्तु के अधिक निकट हैं।

जयदेवकृत काव्य 'गीतागोविन्द (बारहवीं शती का उत्तरार्ध) की सरणि पर अनेक कवियों ने काव्यों की रचना की जिनमें न केवल श्रीकृष्ण राधा जी के प्रेम को कथा का आधार बनाया बल्कि शिव–पार्वती और श्रीराम–सीता के प्रेम पर आधारित काव्यों की भी रचना की। वैष्णव सम्प्रदाय में भक्ति को बहुत अधिक महत्त्व दिया गया है। इसके अनुसार ज्ञान की इच्छा और क्रिया आदि से भक्ति की पुष्टि होती है। वैष्णव सम्प्रदाय की परम्परा में ही श्री रामानन्द रॉय (1497AD-1509AD) द्वारा लिखित नाटक 'जगन्नाथ वल्लभ नाटक' में श्री कृष्ण राधा के प्रेम पर आधारित काव्यों में लम्बी सूची में सम्भवतः यह प्रथम नाटक है। यह 'रामानन्द संगीत नाटक' के नाम से भी प्रसिद्ध है जिसमें 'गीत गोविन्द' की भांति 21 रागों का प्रयोग किया गया है। श्री चैतन्य महाप्रभु के पुरी (उड़ीसा) यात्रा से पूर्व लिखा गया है।

प्रस्तुत नाटक में नाटककार ने मुख्यतः विरह में प्रेम भावना को बड़े ही सुन्दर ढंग से चित्रित किया है। नाटक के आरम्भ में (प्रथम अङ्क) में श्रीकृष्ण अपने मित्र रतिकन्दल (विदूषक) के साथ वृन्दावन की रमणीयता को निहार रहे हैं। तभी श्रीराधा अपनी सखी मदनिका के साथ वहाँ आती है और बंशी की मधुर धुन सुन कर मन्त्र–मुग्ध हो जाती है और पूछती हैं कि यह नीलोत्पल के समान कांति वाला, स्वर्ण के समान वस्त्र धारण किए हुए कौन मधुर बंशी बजा रहा है। सखी उत्तर देती है कि–

सोऽयं युवा युवतिचित्तविहङ्गशारवी।
साक्षदिव स्फुरति पञ्चशरो मुकुन्दः।।
यस्मिन् गते नयनयोः पथि सुन्दरीणा।
नीविः स्वयं शिथिलतामुपयाति सद्यः।।

वहीं दूसरी ओर श्रीकृष्ण भी राधा को देख कर सोचते हैं कि अवश्य ही इस सुन्दर स्त्री का जन्म शुभ मुहुर्त्त में हुआ होगा क्योंकि कमलपुष्प व चन्द्रमा दोनों से ही इसके मुख की तुलना नहीं की जा सकती। यथा–

यद्पि न कमलं निशाकरो वा।
भवति मुखप्रतिमो मृगेक्षणायाः।।
रचयति न तथापि जातु ताभ्या।
मुपमितिरन्यपदे पदं यस्य।।

यहाँ पर श्रीकृष्ण और श्रीराधा जी का परस्पर देखते ही प्रथम दृष्टया प्रेम दृष्टिगोचर होता है। जब से श्री राधा ने श्रीकृष्ण को देखा है तभी से उसकी दशा ऐसी हो गई है कि वह अपने नेत्रों से न तो शीतल चन्द्र को देखती है न अपने कानों से कोयल की मधुर ध्वनि को सुनना चाहती है। सखियों द्वारा बातचीत करने पर सही उत्तर भी नहीं देती है। सरवी राधा जी की विरह–वेदना को देख कर एक प्रणय–पत्र शशिमुखी नामक अन्य सरवी के हाथ श्रीकृष्ण के पास भेजती है–

सुदृढ़ विध्यसि हृदयं, लभते मदनः खलु दुर्यशोवलीयः।
दृश्यसे सकलदिक्षुत्वं, दृश्यते मदनो न कुत्रापि।।

श्रीकृष्ण पत्र को पढ़कर मन ही मन सोचते है कि राधा का प्रेम तो चरम–सीमा को प्राप्त कर गया है लेकिन उसके प्रेम की गहराई व स्थिरता को परखने के लिए प्रकट रूप से कहते हैं कि यह मदन कौन है और किस लिए सुन्दरी के हृदय को पीड़ित कर रहा है? क्या यह कंस का कोई सम्बन्धी है? मुझे बताओ, वह कहाँ हैं? मैं अभी उसे अपनी भुजाओं के बल से नष्ट किए देता हूँ और सुन्दरी को चिन्तामुक्त कर देता हूँ। कृष्ण के मुख से इस प्रकार सुन कर शशिमुखी सोचती है कि हमारी सखी राधा ने कैसे व्यक्ति से प्रेम कर लिया है– ''अहो! प्रियसख्या अस्यानानुरागः। पुनः एक बार पत्र पढ़ कर श्री कृष्ण अपने हृदय के भावों को छिपाते हुए शशिमुखी से पूछते हैं कि मैं भली–भाँति समझ नहीं पा रहा हूँ कि वो मुझे चारों ओर कैसे देख रही है–

गोपालवालकवृतो यमुनातटान्ते।
वृन्दावने किमपि केलिकलां भजामि।।
कस्मादियं दिशिदिशि स्फुटरूपभाजं।
मामेव पश्यति कुरङ्गकिशोरनेत्रा?।।

इन ग्वालों से पूछो कि मैं तो यमुना के किनारे इन ग्वालों से घिरा रहता हूँ। मैंने कब उसका पीछा किया है और वह कैसे हर स्थान पर मुझे देखती है। यदि सब जानेंगे तो मेरा उपहास करेंगे। राधा जैसी युवती अपने कुल की मर्यादा का पालन न करके कैसे मुझ जैसे एक किशोर के प्रति अपना प्रेम प्रकट कर सकती है? इसलिए अपनी सखी को इस प्रकार का आचरण करने से रोको। क्योंकि

शशिनि न रागं भजते नलिनी। रविमनु नैव वृषस्यतिरजनी।।
कुलवनितानामिदमाचरितम्। परपुरुषाधिगमे गुरुदुरितम्।।
शशिमुखि!वारय वारिजवदनां अनुचितविषय विकस्वरमदनाम्।
सा यदि गंजयति न कुल चरित्रम्। किमिति वयं कलयाम न चित्रम्।।

श्रीराधा यह जान कर अत्यन्त दुःखी हो उठती हैं कि श्री कृष्ण ने उनका प्रणय–निवेदन ठुकरा दिया है। वे अपने को हीन–मलिन मानने लगती है और अपने में ही त्रुटि देखती हैं। कृष्ण की प्रेयसी होने की अयोग्यता का अनुभव करती हुई कह उठती हैं कि मैंने उच्च कुल में जन्म लेकर भी यह क्या दुराचरण कर डाला, मुझ जैसा लज्जाहीन और कौन होगा अब क्या करुँ? श्रीकृष्ण को कैसे प्राप्त करुँ? अपनी विश्वसनीय सरवी मदनिका से पूछती है क्या उपाय करें जिससे श्रीकृष्ण से संयोग हो सके क्योंकि कृष्ण तो न प्रेम को ही जानते हैं और न ही वियोगजन्य पीड़ा को समझते हैं। यह कामदेव भी पात्र–अपात्र का ध्यान नहीं रखता जो इसने मेरे हृदय को तो बेंध दिया है लेकिन कोई दूसरा किसी दूसरे की पीड़ा को कैसे समझ सकता है। यह यौवन कितने दिन का है और विधाता ने न जाने भाग्य में क्या लिखा है? मेरा इसमें कोई दोष नहीं है क्योंकि जब से वे मधुसूदन मेरे दृष्टिपथ में आए हैं, तब से कामदेव ने मेरे मस्तिष्क पर अतिक्रमण कर लिया। यदि पुनः एक बार कृष्ण मुझे दिख जाएं तो मैं जीवनभर के लिए उस क्षण को अमूल्य धरोहर की भाँति संजो कर रख लूँगी।

मदनिका श्री राधा जी को आश्वस्त करते हुए कहती है कि श्रीकृष्ण के साथ बातचीत करने से तो उनके मनोभावों का पता चलता है कि वे भी तुम्हें उतना ही प्रेम करते हैं जितना तुम उनसे करती हो। अधिक जानकारी के लिए माधवी नामक सखी को तुम्हारा चित्र दे कर भेजा था, वह वापिस लौट आयी है। अतः उस चित्र पर अंकित अक्षरों को देख कर श्रीकृष्ण के प्रेम भाव को जानकर मदनिका कह उठती है–

स्फुटं मुकुन्दोऽपि चकार रागम्।
भग्नः कदाचित् यदयं प्रमादात्।।
प्रेमाङ्कुरो योजायितुं न शक्यः।
तद वत्से! मातिविक्लवा भूः।
फलितोऽस्माकं मनस्कामतरुः।।

राधा जी को यकायक अपने भाग्य पर विश्वास नहीं होता कि श्रीकृष्ण ने भी अपना प्रेम भाव प्रकट कर दिया है। अतः वे पुनः मदनिका को भेज कर अधिक विश्वसनीयता के साथ पता लगा कर संयोग करवाने के लिए प्रार्थना करती हैं। मदनिका श्रीकृष्ण और विदूषक का वार्तालाप छिप कर सुनती हैं और जान जाती है कि श्रीकृष्ण राधा के प्रथम प्रणय निवेदन को स्वीकार न करके दुःखी हैं और पश्चाताप की अग्नि में जल रहे हैं। वे चाहते हैं कि किसी भी प्रकार अपने पुण्य कर्मों के फलस्वरूप उसका पुणः दर्शन कर सकें–

हा हा शुक्तिधिया महामणिरभूत व्यक्तो मया दैवतो।
यायाल्लोचनगोचरं पुनरियं पुण्यैरगणैर्मम।।

मदनिका भी अवसर का लाभ उठाकर श्री राधा की वियुक्तावस्था का वर्णन करते हुए कहती है कि वह क्षीणकाय हो गई है केवल लावण्य ही शेष रह गया है। किसी प्रकार कठिनाई से मिलन की आशा लिए हुए जीवन धारण कर रही है। चन्दन का लेप भी उसे शक्ति प्रदान नहीं करता चन्द्र और कमल भी उसे अच्छे नहीं लगते। निरन्तर अश्रुधारा उसके नेत्रों से बहती रहती है। भले ही आप उसके हृदय में निवास करते हैं लेकिन आप उसका दुःख दूर नहीं कर सकते फिर भी मैं उसकी दशा बताने आपके पास आई हूँ–

यदा नासौ दोष गणयति गुरुणां कुवचने।
न वा तोषं धत्ते सरसवचने नर्म्मसुहृदाम्।
विषाभ श्रीखण्ड कलयति विधुं पावकसमं।
तदस्यास्तदवृत्त त्वयिगदितुमत्राहमगमम्।।

श्री राधा की विरह वेदना को जान कर श्री कृष्ण अधीर हो उठते हैं और मदनिका से शीघ्र ही अपनी सरवी से मिलने का प्रबन्ध करने के लिए कहते हैं –

त्वं चेदवज्ञचनपरेस्मरवारिराशे।
रुद्धर्तुमेषि तदकारणवत्सासि।।

तत् कैशर द्रुमनिकुञ्जगृहे प्रसाद्य।
तामानयस्व नयकोविदतां तनुष्णव।।

मदनिका लौट कर श्री कृष्ण की विरह पीड़ा का वर्णन करके श्री राधा को उनसे संयोग के लिए कहती है–

गोविन्दस्तवविप्रयोगविधुरः किं किं न वा चेष्टते।
तत् कुञ्जोदरतल्पकल्पनपरं राधे तामाराधय।।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि श्री कृष्ण के प्रति श्री राधा का प्रेम भाव बड़ा ही विलक्षण है। श्रीराधा के प्रेम–भाव में प्रधान तत्त्व है सहज सम्पूर्ण समर्पण। अपने सुख की कामना, वासना, ममता आदि सभी विकारों का समर्पण और यह यागमयी प्रेम अलौकिक है। त्याग से ही प्रेम उदय होता है, जहाँ जितना अधिक त्याग है, वहाँ उतना ही अधिक प्रेम है, उतना ही अधिक सुख है। श्रीराधा ने विश्व के समक्ष त्यागपूर्वक विशुद्ध प्रेम का जो महान् आदर्श उपस्थित किया है, वह अतुलनीय है। वास्तव में श्री राधा के प्रेम भाव में 'तृष्णा' नहीं 'त्याग' है, अधिकार नहीं सेवा है, द्वेष नहीं, प्रेम है लेना नहीं देना है और वे गुणों का बखान नहीं चाहती बल्कि स्वयं को दोषों की रवान मानती हैं। भक्ति का संबंध भगवत् प्राप्ति से है। भगवत् संबंधी रसों में प्रधान रस पांच है– शांत, दास्य, सख्य, वात्सल्य और माधुर्य। इन पांचों रसों का प्रयोग लौकिक प्रेम में भी होता है परन्तु भगवान् के साथ सम्बन्ध होने से ये पांचों रस भक्ति के या भगवत् प्रेम के उत्तरोत्तर बढ़े हुए पांच भाव बन जाते हैं, जो भक्तों को प्राप्त होते हैं।

अन्ततः भगवत् प्रीति में जो क्रमशः दास्य, सख्य, वात्सल्य रस से उत्तरोत्तर बढ़ता मधुर रस बन जाता है वह माधुर्य– रस कहा जाता है। माधुर्य भक्ति रस में प्रेम, श्रृंगार और विरह की प्रधानता है। श्रीकृष्ण की श्री राधा व गोपियों के साथ की गई मधुर लीलाएं भक्तों के विकास का मार्गदर्शन करती हैं। श्री राधा का प्रेम यह भी बतलाता है कि भक्त त्यागमयी प्रेम की चिंतन क्रिया में निरन्तर बढ़ता हुआ प्रेम के उच्चतम भाव, यानि माधुर्य भाव की अवस्था को प्राप्त कर सकता है और अंततः इसी भाव में सर्वोच्च श्री कृष्ण ने स्वयं श्री राधा जी व गोपियों के साथ रास रचा कर उन्हें आध्यात्मिक ज्ञान तो दिया ही, साथ ही उन्हें यह भी बताया कि प्रेम भी भक्ति का एक मार्ग है जिसके द्वारा परमात्मा तक पहुँचा जा सकता है।

संदर्भ

1. जगन्नाथ वल्लभ नाटक – श्री रामानन्द रॉय।
2. श्रीमद्भागवत पुराण – गीताप्रेस, गोरखपुर।